अध्याय-5

दुष्यंत कुमार की कविता के कुछ अन्य पहलू

1. प्रेम
2. सौंदर्य
3. प्रंशसात्मक कविताएँ

सन्दर्भ-सूची

दुष्यंत कुमार के काव्य-संसार में वर्णित सामाजिक यथार्थ जहाँ उन्हें अपने कतिपय समकालीन रचनाकारों से अलगाता है, वहीं उनके काव्य में निहित प्रेम और सौंदर्य के चित्र, प्रशंसात्मक कविताएँ, उनके कृतित्व को नई पहचान देती हैं। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और नैतिक अवमूल्यन, विसंगति और विद्रूपताओं के अलावा कवि ने प्रेम और सौंदर्य के जिन विविध पहलूओं को चित्रित किया है, वह उनके रचनात्मक वैविध्य को दर्शाता है। प्रेम–वर्णन में निजी प्रेम से लेकर देश–प्रेम और जन–प्रेम समाहित है। प्रेम उनके जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता हैं। वे प्रेम को 'विश्व की सबसे अच्छी देन' और 'मानव का जन्मसिद्ध अधिकार' मानते हैं। दुष्यंत कुमार ने प्रेम और सौंदर्य के चित्र व्यापक स्तर पर अंकित किए हैं। उनके सौंदर्य–अंकन में वैविध्य दिखाई पड़ता है। उनकी रचनाओं में मानवीय सौंदर्य अंकन के अलावा प्रकृति का सौंदर्य भी अंकित हुआ है। प्रत्येक जनकवि की तरह कवि दुष्यंत कुमार भी श्रमशील सौंदर्य को सर्वश्रेष्ठ सौंदर्य मानते हैं। उनके सृजनात्मक जगत में निहित प्रशंसात्मक कविताएँ उनके रचनात्मक संसार का एक महत्वपूर्ण पहलू है। ये प्रशंसात्मक कविताएँ सच्चे अर्थो में, कवि दुष्यंत कुमार का उन महान विभूतियों के प्रति श्रद्धा और भक्ति का काव्यात्मक प्रकाशन है, जिन्होंने रचनाकार दुष्यंत कुमार के अंतर का संस्पर्श किया, उन्हें शोषित, अवहेलित, पीड़ित जन का अपना कवि बनाया। महात्मा गाँधी और नेताजी सुभाषचंद्र बोस वे महान राजनीतिक व्यक्तित्व थें,

जिन्होंने अपना तन-मन, सुख-चैन सबकुछ देश और सामान्यजन के लिए न्यौछावर कर दिया । इसी तरह महाकवि तुलसीदास और महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' हिन्दी साहित्य जगत के आधार-स्तम्भ है । हिन्दी साहित्य का विराट् और वैभवपूर्ण संसार इनकी प्रेरणा पर अवलम्बित है । इन दोनों कवियों ने हिन्दी साहित्य को वैश्विक पहचान दीं, नये रचनाकारों को दिशा दीं और समाज में मानवीय आस्थावादी मूल्यों की प्रतिष्ठा की । इस अध्याय में दुष्यंत कुमार की कविता में निहित इन सभी पहलूओं पर अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

1. प्रेम

प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में स्थायी भाव के रूप में कई तरह की अनुभूतियाँ विद्यमान रहती हैं, उनमें से प्रेम मानवीय अनुभूति का सबसे कोमलतम रूप है । प्रेम सृजन है, प्रेम आस्था है, प्रेम समर्पण है, प्रेम अभिलाषा है । प्रेम हृदय की निकटतम दूरी है । प्रेम मानव जीवन का सर्वस्व है । हृदय प्रेम भाव–सम्पदा से सम्पन्न होते ही अपने प्रिय से निकटता का अहसास करने लगता है । दूरियाँ नजदीकियों में परिवर्तित होने लगती है । हर क्षण प्रिय का अहसास हृदय को आनन्दित करता रहता है । प्रेम में व्यक्ति की निजी सत्ता विलीन होकर अपने प्रिय के साथ इस तरह विन्यस्त हो जाती है कि दोनों में कोई खास पार्थक्य नहीं दिखता । प्रेम पूर्णता है । प्रेम में प्रिय के गुण और अवगुण दोनों को सहजता

से स्वीकार लिया जाता है । इस तरह प्रेम में दो अपूर्ण व्यक्ति एक-दूसरे को पूर्ण करते हैं । यह एक ऐसा भाव है, जिसमें प्रिय की निठुरता भी हृदय को भाती है । प्रेम में पगा हृदय मानवीय चेतना से आपूरित, उदार और संवेदनशील होता है । उसमें समस्त संसार के लिए करूणा और स्नेह विद्यमान हो जाता है । वास्तव में प्रेम व्यक्ति और समाज के सही और संतुलित विकास के लिए एक आवश्यक भाव है । प्रेम के कारण ही व्यक्ति का सामाजिकरण हो पाता है । प्रेम जोड़ने का कार्य करता है–व्यक्ति से व्यक्ति को और व्यक्ति को समाज से । सामान्यत: जो व्यक्ति या वस्तु हमें अच्छी लगती है, जिसका प्रभाव हमारे मन–मस्तिष्क पर छाया रहता है और हम अपने–आप को उससे पृथक नहीं कर पाते हैं, वही भाव प्रेम है । प्रेम हमारे जीवन में रचा–बसा है । प्रेम से पृथक हम अपने अस्तित्व की परिकल्पना भी नहीं कर सकते हैं । प्रेम कई रूपों में हमारे अंतर्मन में विद्यमान है । प्रेम केवल स्त्री–पुरूष तक ही सीमित नहीं है । इसका विस्तार प्रकृति से लेकर समस्त चराचर जगत तक है । प्रेम के मूल में आकर्षण होता है । बिना आकर्षण के प्रेम की उत्पत्ति असम्भव है । यह आकर्षण कहीं शारीरिक सौंदर्य के प्रति है तो कहीं आत्मिक सौंदर्य के प्रति । प्रेम के इसी महात्मय को समझते हुए भक्तिकाल के संतकवि कबीरदास ने कहा कि जिस हृदय में प्रेम नहीं है, वह हृदय श्मशान है । उन्होंने सबसे बड़ा ज्ञानी उसे माना जिसका हृदय प्रेम-भाव से आपूरित है । प्रेम हमेशा से साहित्य का केंद्रिय विषय रहा है । मानव-हृदय की इस प्रमुख वृत्ति को

प्रत्येक युग के रचनाकारों ने अभिव्यक्ति दी है । आदिकाल के कवि चन्दबरदाई ने जहाँ 'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज चौहान और संयोगिता के लौकिक प्रेम को जीवंत किया है, वहीं भक्ति के रूप में भक्तिकालीन सगुण धारा के कवि सूरदास ने कृष्ण और गोपियों के एकनिष्ठ प्रेम को भ्रमर-गीत प्रसंग में जीवंत कर दिया है । प्रेममार्गी शाखा के कवि जायसी ने सूफी प्रेमकाव्य लिखकर लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की सफल नियोजना की है तो रीतिकालीन कवि घनानन्द ने रीतिकालीन सामंती प्रेमावृत्ति से प्रेम को मुक्त कर प्रेम के पावन और निर्मल स्वरूप की प्रतिष्ठा की । छायावादी कवियों ने स्वच्छन्द प्रेम की अभिव्यंजना की है तो छायावादोत्तर युग के कुछ कवियों ने प्रेम को यौन कुंठा का पर्याय बना दिया । वर्तमान समय वैश्वीकरण और बाजारीकरण का है । आज के प्रेम में वैश्वीकरण और बाजारीकरण का प्रभाव व्यापक रूप में परिलक्षित होता है ।'वेलेंटाइन डे' जैसे आयोजनों ने प्रेम-भावना को विस्तारित तो किया है, पर उसका नकारात्मक पक्ष ही ज्यादा दिखाई देता है । सांम्प्रतिक समय में प्रेम एक पवित्र भाव के स्थान पर प्रदर्शन की वस्तु बनता जा रहा है ।

हिन्दी के कई विद्वानों ने प्रेम को परिभाषित किया है । आचार्य रामचंद्र शुक्ल प्रेम को परिभाषित करते हुए लिखते हैं – "सामान्यत: सुख देनेवाली या चिरकाल से साथ रहनेवाली वस्तुओं के प्रति राग और दु:ख देनेवाली वस्तुओं के प्रति द्वेष का बीज सबके हृदय क्षेत्र में ढँका रहता है । यही राग जब अंकुरित

या व्यक्त होकर किसी व्यक्ति–विशेष की ओर पहले पहल उन्मुख होता है, तब 'लुभाना' कहलाता है और जब उस विशेष में जाकर स्थिर हो जाता है, तब 'प्रेम' कहा जाता है ।''[1] शुक्लजी ने दो बातों की ओर इशारा किया है । प्रथम यह कि प्रेम राग की पराकाष्ठा है । किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति जब भावनायें घनिष्ट हो जाती है, तब प्रेम का उद्‌भव होता है । दूसरी बात यह है कि प्रेम में चित्त किसी एक के प्रति ही एकनिष्ठ रहता है । उसका हास-रूदन, आशा-आकांक्षा, हार-जीत सबकुछ उसी पर केंद्रित हो जाता है ।

रमाकांत शर्मा प्रेम की अनोखेपन के बारे में लिखते हैं –''प्रेम के बिना जीवन की गति ही संभव नहीं है । हम जिसे प्रेम करते हैं, उसी की रक्षा के लिए मोर्चा बांधते हैं । जिससे घृणा करते हैं, उसके नाश के लिए कृतसंकल्प होते हैं ।''[2] यहाँ प्रेम को जीवन का मूलाधार माना गया है । आलोचक के अनुसार सच्चा प्रेम हमेशा एकनिष्ठ होता है । हमारी सारी आशा-आकांक्षा, हर्ष-विषाद उसी एक की क्रिया–प्रतिक्रिया से परिचालित होने लगती है ।

एकांत श्रीवास्तव का मानना है कि –''प्रेम के बिना किसी भी कला का सृजन नहीं किया जा सकता । एक मनुष्य और एक कवि जो अपने घर-परिवार, अपनी धरती, प्रकृति, जीवन, समाज और समय से प्रेम करता है, वही कुछ रच सकता है । अपने व्यापक अर्थ में प्रेम संवेदनशील मनुष्यता के आत्मीय विस्तार का ही पर्याय है ।''[3] आलोचक का मानना है कि प्रेम हमें सृजनशीलता के

लिए उत्प्रेरित करता है । जिस तरह कबीर ने माना है कि प्रेम शून्य हृदय श्मशान की भांति निरपेक्ष और असंवेदनशील हो जाता है, उसी तरह एकांत श्रीवास्तव भी इस बात पर विशेष बल देते हैं कि प्रेम व्यक्ति की महती आवश्यकता हैं । व्यक्ति का सर्वांगीण विकास खासकर कलात्मक विकास प्रेम के द्वारा ही सम्भव हो पाता है । प्रेम व्यक्ति को मानवीय गुणों से सम्पन्न करता है । उसे समाज-सापेक्ष बनाता है । वह मनुष्य को उदार और कोमल हृदयी बनाता है ।

ब्रजमोहन शर्मा प्रेम को परिभाषित करते हुए लिखते हैं – "प्रेम ही जीवन है, प्रेम ही सृजन है, प्रेम ही मुक्ति है और प्रेम ही आनन्द है ।....प्रेम सार्वभौमिक, सार्वकालिक, सनातन और नित्यनवीन है । कोख के अंधेरे से कब्र तक के अंधेरे तक प्राणी प्रेम को तलाशता है ।"[4]

प्रेम और सौंदर्य के कवि कहे जाने वाले छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद की मान्यता है कि 'प्रेम के प्रकाश में सभी कर्म उज्ज्वल और उदार बन जाते हैं' । प्रेम में प्रत्याशा को निरर्थक मानने वाले कवि जयशंकर प्रसाद समर्पण को ही प्रेम की संज्ञा देते हैं –

" पागल रे वह मिलता है कब,
उसको तो देते ही हैं सब
X X X
तू क्यों फिर उठता है पुकार ?
मुझको न मिला रे कभी प्यार !"[5]

हिन्दी साहित्य में प्रेम का चित्रण वैयक्तिक प्रेम, प्रकृति प्रेम, देश प्रेम, जन प्रेम आदि कई रूपों में दिखलाई पड़ता हैं । नयी कविता के कवि दुष्यंत कुमार की आरम्भिक कविताओं में सर्वाधिक प्रेम चित्र ही है ।

वैयक्तिक प्रेम

दुष्यंत कुमार के काव्य में वैयक्तिक प्रेम दो रूपों में चित्रित हुआ है । एक प्रेमिका के प्रति और दूसरा अपनी पत्नी के प्रति । उनकी आरम्भिक प्रेम कविताओं के केंद्र में उनकी प्रेमिका हेमलता त्यागी रही है । कवि ने अपने सृजन-कर्म का आरम्भ किशोरवय से किया । उम्र के इस पड़ाव पर प्रेम-संबंध स्थापित होना स्वाभाविक ही है । किसी के प्रति आकर्षित होकर दिन–रात उसकी स्मृति में बने रहना, इस वय की एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है । किशोर कवि दुष्यंत कुमार में हमें यह स्वाभाविक प्रतिक्रिया दृष्टिगत होती है । दुष्यंत कुमार के बारे में यह चर्चित था कि वे हेमलता त्यागी नामक सहपाठी से अथाह प्रेम करते थें । हेमलता त्यागी किशोर कवि के मन–मस्तिष्क पर पूरी तरह से छायी हुई थी । विजयबहादुर सिंह नहटौर काल में लिखी गई कवि दुष्यंत कुमार की कविताओं की केंद्रिय विषयवस्तु प्रेम को स्वीकारते हैं । उनकी धारणा है कि इन सारी प्रेम–कविताओं की मूल प्रेरणा कवि की प्रेमिका हेमलता त्यागी ही है । बकौल विजयबहादुर सिंह– ''कवि के जीवन में संभव है और भी लोग आए हों, पर इस भाव-संबंध ने उसे

दीवानगी तक पहुँचा दिया है । उन दिनों लिखी गई लगभग सारी कविताओं की मूल प्रेरणा यही हेमलता है, जिसके विरह ने कवि को झकझोरकर रख दिया है और वह व्याकुलता का एक उफनता हुआ सागर बन गया है ।''[6]

दुष्यंत कुमार के वैयक्तिक प्रेम में संयोग के सुखद क्षण भी है और वियोग का अथाह दुख भी । उनके प्रेम वर्णन में किशोर-सुलभ भावुकता द्रष्टव्य है । उनकी प्रेम कविताओं में प्रेम भाव के आरोह-अवरोह के कई दृश्य चित्रित हुए हैं । जिस तरह भक्तिकाल के संत कवि कबीर ने प्रेम शून्य हृदय को व्यर्थ माना और उसे 'श्मशान तुल्य' कहा है, उसी तरह कवि दुष्यंत कुमार भी यह मानते हैं कि मनुष्य के पास हृदय इसीलिए होता है कि वह प्रेम को अनूभुत कर सकें –

'' हो जिसमें प्यार न लेशमात्र मानव का नहीं कलेजा है,
है प्रस्तर का निर्माण बात ये नहीं तनिक भी बेजा है,
यौवन आता है तूफानी लहरों –सा क्षण को जीवन में
दिल दिया इसलिए प्यार करे इंसान धरा पर भेजा है ।''[7]

कवि की दृष्टि में प्रेम जीवन जीने के लिए अनिवार्य तत्व है । प्रेम व्यक्ति को समर्थवान, धैर्यवान, लक्ष्योंमुख, सकारात्मक दृष्टिसम्पन्न और सबसे बढ़कर मानवीय बनाता है । प्रेम व्यक्ति के अंतर प्रदेश को उर्वरक बनाता है । उसमें उर्जा और उत्साह का संचार करता है । कवि का तो यहाँ तक मानना हैं कि प्रेम मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है –

" मैं प्यार मनुज का जन्मसिद्ध अधिकार मानता हूँ केवल !
सबसे अच्छी देन विश्व को प्यार मानता हूँ केवल ! "[8]

कवि प्रेम की विलक्षणता देखकर मंत्रमुग्ध है । प्रेम उनके लिए एक पवित्र भाव है, जो जीवन को सुमधुर सुगंधियों से गमका जाता है–

" प्यार तन पर दमकता है मोती सदृश
प्यार आँखों में खिलता कमल की तरह
प्यार ऐसे गमकता है जैसे जुही
प्यार प्राणों में गंगा के जल की तरह "[9]

किशोर कवि को इस बात का गर्व है कि आनन्दप्रदाता प्रेम के सुखद अहसास को उन्होंने स्वयं भोगा है –

" जब इठला–इठलाकर लहरें
तट से मिलने आया करतीं
दे परिचुंबन 'तुम चंचल हो'
कहकर यों शरमाया करतीं
मैं सोचा करता हूँ मैंने
यह शरमीलापन देखा है
मैं सोचा करता हूँ सुख का मैंने भी एक क्षण देखा है ।"[10]

कवि को लगता है कि प्रेम करना तो सहज है, परंतु उसका निर्वाह करना अत्यंत

कठिन है । प्रेम मार्ग में कठिन और कष्टदायक रास्तों से गुजरना पड़ता है । विरह की निर्ममता को हँसकर झेलना पड़ता है –

" नयनों की भाषा से उर का प्यार जताना बहुत कठिन है
प्यार सरल है किंतु रूपसी उसे निभाना बहुत कठिन है "[11]

कवि के लिए प्रेम एक प्रेरक तत्व है । प्रेम व्यक्ति में असीम उर्जा, उत्साह और आशा का संचार करता है । कवि की कई कविताओं में प्रेम का यह सकारात्मक पक्ष दृष्टिगत होता है । 'तुम एक बार मुस्का दो ना!', 'दूसरा प्रारूप' आदि ऐसी ही कविताएँ है । 'मेरा प्यार' कविता में प्रेम का यह सकारात्मक पक्ष दृष्टिगत है –

" जुए के अंतिम पत्ते-सा मेरा प्यार
हारे ना
थके हुए सपनों की गगन-चुंबिकी डोर
टूटे ना
भले बालू के हों
पर मेरे हाथों में आए तट
छूटें ना,
तुम चाहो तो मैं जी सकता हूँ हाँ !!"[12]

दुष्यंत कुमार की कविताओं में प्रेम के संयोग और वियोग, दोनों ही रूप नजर आते हैं । 'विक्षत उर का उपचार बना', 'इन नयनों का गीत तुम्हीं हो,

'इन अधरों का गीत बनी तुम' जैसी कविताएँ संयोग के विविध भावों को अनावृत्त करती है । प्रथम मिलन में प्रेम की स्वीकारोक्ति करते हुए कवि लिखते हैं–

" नयन तुम्हारे क्षण-सुख पाकर प्यार किसी का खो बैठे हैं ,
हमको देखो प्रथम दृष्टि में प्राण ! तुम्हारे हो बैठे हैं ।"[13]

इसी तरह कवि प्रेम सम्पदा को प्राप्त कर स्वयं को धन्य समझते हैं –

" जग कहता मैं हार चुका हूँ ,
खो सुख का संसार चुका हूँ ,
पर मैं इसको जीत बताता
मेरी पावन जीत तुम्हीं हो ।
इन नयनों का गीत तुम्हीं हो ।
मैंने रो-रोकर गाया है,
कुछ खोकर तुमको पाया है ,
गीतों के आधार, तरीके
संबल, एक पुनीत तुम्हीं हो ।
इन नयनों का गीत तुम्हीं हो ।"[14]

कवि ने प्रेम के अंतर्द्वन्द को 'अंतर नहीं दिखाया जाता' कविता में चित्रित किया है । प्रेम में आँखे कुछ और कहती है और जुबान कुछ और । प्रेम में 'मौन भाषा' का अपना महत्व है । प्रेमी हृदय अपने उद्‌गारों को नि:शब्द नेत्रों के

माध्यम से अभिव्यक्त करने की आकांक्षा लिए अपने प्रिय-पात्र के सम्मुख जाता है, पर वह अपने को अभिव्यक्त नहीं कर पाता है । कवि इस मानसिक अंतर्द्वन्द को चित्रित करते हुए अपनी बेबसी को जाहिर करते हैं –

" अंतर में बसने वाले को अंतर नहीं दिखाया जाता ।
कितनी बार हृदय ने चाहा
अपने सारे घाव दिखा दूँ ,
कितनी बार प्रणय ने चाहा
अपने मन की बात बता दूँ,
कह–कहकर थक गये नयन ,
दु:ख,मुख से नहीं बताया जाता ।"[15]

दुष्यंत कुमार के रचना जगत में वियोग के चित्र अधिक हैं । इसका मुख्य कारण यह है कि जिस हेमलता त्यागी से वे अथाह प्रेम करते थें और उनसे विवाह करना चाहते थें, वह सामाजिक और पारिवारिक दबाब के कारण पूरी न हो सकी । फलत: किशोर कवि वियोग व्यथा से व्यथित होकर अपने मनोभावों को कविता में प्रकट करने लगें –

" आँसू से लिखता जाता हूँ मैं पीड़ा का इतिहास प्रिये !
इस हँसती हुई शर्वरी में
जीवन का प्रात न हो पाया

मुरझाया किस्मत प्राणों का

हर्षित जलजात न हो पाया''[16]

प्रेम के बारे में समाज में जो नकारात्मक सोच व्याप्त है, उस पर कवि प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखते हैं –

'' प्यार का दूसरा रूप जगत वाले परिताप बताते हैं

कम ऐसे भी हैं यहाँ नहीं जो इसको पाप बताते हैं,

पर बुद्धि मंच से मैं उनको ललकार दिया करता हूँ जो

वरदान नहीं कहते इसको प्रत्युत अभिशाप बताते हैं ''[17]

कवि के लिए प्रेम एक पवित्र भावना है । प्रेम को मनोरंजन का साधन-मात्र समझने वालों के प्रति कवि ने बेधड़क होकर प्रहार किया है । निजी स्तर पर भी जब उनके पिता हेमलता त्यागी को विस्मृत कर, उनके द्वारा स्वीकृत की हुई लड़की से विवाह करने का आदेश देते हैं, तब कवि बेखौफ होकर अपने पिता के सामंती सोच का प्रतिवाद करते हैं । इस संबंध में उनके मित्र महावीर सिंह लिखते हैं –''मुझे भली प्रकार स्मरण है कि पिता जी द्वारा विवाह का आग्रह करने पर उसने नहटौर (जिला. बिजनौर) निवासिनी अपनी पूर्व परिचिता को वरण करने का प्रस्ताव किया था । इस पर पिता जी ने तर्क दिया था 'बेटा मोहब्बत हमने भी की है, इश्क हमने भी लड़ाया है लेकिन हम तुम्हारी तरह दीवाने बन कर हर उस लड़की से शादी नहीं करते फिरे ।'' तो दुष्यंत ने उनके सामंती दृष्टिकोण को इतनी

साफगोई एवं निधड़क ढ़ंग से परास्त किया था कि पिता जी बगलें झाँकने लगे थे ।''[18] दुष्यंत कुमार एक गंभीर प्रेमी थे । यही वजह है कि वे दो प्रेम करनेवालों को अलग करनेवाली समाजिक रूढ़ियों और परम्परा को अस्वीकार करने के पक्षधर रहें । उनकी कई रचनाओं में उनकी यह सोच व्यक्त हुई है । कवि कामना करते हैं –

'' मैं ऊब चुका इस जीवन से
जिसमें पग–पग पर दु:ख मिलें
मेरी तो यह इच्छा है प्रिय आओ
हम तुम कहीं दूर चलें
स्वप्नों का हो रंगीन देश
हो अस्त-व्यस्त दुर्बल रिवाज !''[19]

उनके वैयक्तिक प्रेम के अंतर्गत विरह के चित्र ही सर्वाधिक है । इस विरह–व्यथा के मूल में दो कारण है । प्रथम कारण प्रथम प्रेम की दुखद अंविति और दूसरा कारण है विवाहोपरांत पढ़ाई और नौकरी के लिए पत्नी से दूर रहना । उनकी प्रारम्भिक कविताओं में प्रेमिका के प्रति अगाध प्रेम दिखाई पड़ता तो परवर्ती रचनाओं में पत्नी के प्रति ।

विरह को कवि ने महत्तवपूर्ण माना है । वे 'विरह को प्यार के दीपक में वर्तिका तेल के सदृश' मानते हैं । विरह की कसौटी पर कसकर ही यह परखा

जा सकता है कि प्रेम कितना खरा है । कवि लिखते हैं–

" विरह अग्नि पर चल न सके जो
मैं कहता हूँ प्यार नहीं वो
नित कुन्दन-सा पड़ पावक में
मेरा प्यार चमकता जल-जल ।"[20]

विरह के विविध मनोभाव उनकी कविताओं में विन्यस्त हैं । विरह व्यथा से उत्पन्न व्याकुलता, खिन्नता, अकुलाहट आदि का कवि ने चित्ताकर्षक चित्रण किया है । सामाजिक बंधन के कारण मिलन से वंचित कवि अपने को रात-दिन वियोग की ज्वाला में जलनेवाला शलभ संबोधित करते हैं । कवि एक पल के लिए भी अपने प्रेम पात्र को विस्मृत नहीं करते । उसकी स्मृति कवि के हृदय में घर कर चुकी है । अपनी इस स्थिति पर कवि लिखते हैं –

" कभी कल्पना या निशा के करों में
कभी वाटिका या कभी खँडहरों में
तुम्हें एक क्षण को नहीं भूल पाया
हृदय की तुम्हें प्रीत देता रहूँगा ।"[21]

प्रेम भाव को उद्दीप्त करने में प्रकृति की अहम भूमिका रही है । छायावादी कवियों ने तो अपनी प्रेमानुभूति को प्रकृति के माध्यम से ही प्रकट किया है । दुष्यंत कुमार की कविताओं में प्रणयानुभूति के वर्णन के लिए प्रकृति और

प्राकृतिक उपादानों का सहारा लिया गया है । चाँदनी रात में प्रकृति का उद्दीप्त रूप अपने प्रिय पात्र से दूर कवि को असहनीय पीड़ा से भर देती है –

" जब बूँदों में आकाश उतर आता है,
जब धरती पर मधुमास उतर आता है,
जब किसी वियोगी के सूखे अधरों पर
फिर से वह खोया हास उतर आता है
तब आँखों में सावनी मेघ छा जाते
इस व्यथित हृदय की पीड़ा बढ़ जाती है ।"[22]

वियोग की असहनीय पीड़ा कवि को मरणासन्न स्थिति में ला देती है । 'जल रहे हैं मेरे गान' शीर्षक कविता में कवि विरह की तीव्रता को मार्मिक ढ़ंग से नियोजित करते हैं । कवि अपनी दयनीय स्थिति को व्यक्त करते हुए लिखते हैं –

" ढल रही हैं मूक श्वासें
ढल रहा है मौन जीवन,
चिर व्यथाओं में सिसकता
चल रहा है मौन यौवन,
बह रहा है घोर झंझा
तड़फड़ाते प्राण मेरे ।"[23]

इस तरह स्पष्ट है कि प्रेम कवि के लिए एक अनिवार्य तत्व है ।

उनके प्रेम में आशा-आकांक्षा के साथ सजग कौतुहलता और जिज्ञासा का भाव भी दिखाई पड़ता है । प्रेमिका के प्रति कवि ने जो भी प्रेम–उद्‌गार प्रकट किये हैं, उनमें किशोर सुलभ भावुकता निहित है । वहाँ संयोग के चित्र कम है पर वियोग की अथाह पीड़ा सर्वत्र नजर आती है । वियोग व्यथा को कवि ने मार्मिक रूप में अभिव्यक्ति दी है ।

अपनी कतिपय रचनाओं में कवि दुष्यंत कुमार ने अपनी पत्नी राजेश्वरी देवी के प्रति अपनी प्रेम-भावना को मनमोहक ढ़ंग से प्रकट किया है । कवि को ऐसा प्रतीत होता है कि पत्नी के रूप में राजेश्वरी देवी को पाकर उनकी मनवांछित कामना पूर्ण हुई है । इतना ही नहीं प्रेमिका के वियोग व्यथा से क्षुब्ध आत्मा ने पुन: नवजीवन पाया हो । पत्नी के रूप में राजेश्वरी देवी को पाकर कवि अपने भाग्य की सराहना करते हैं –

" धन्य हो गया तुमको पाकर जीवन मेरा
संजीवन की बूँदें पाई जीवन और मरण ने
मंजिल की परछाई हारे-थके चरण ने
मनवांछित पाए स्वप्नांकन नयन–नयन ने
क्षुब्ध प्राण पंछी ने पाया रैनबसेरा"[24]

दुष्यंत कुमार की कविताओं में दाम्पत्य प्रेम के अंतर्गत संयोग के चित्र कम हैं । इसकी मूल वजह है – शिक्षा और रोजगार की तलाश में पत्नी और

परिवार से दूरी । प्रवास की पीड़ा कवि-हृदय को कटोचती रहती है । पत्नी और परिवार की स्मृति उन्हें लौटने के लिए प्रेरित करती है –

" तुम्हारे प्यार में पागल प्रवासी लौट आया है ।
तुम्हारे नयन का घायल प्रवासी लौट आया है ।
कि जिसकी याद में मधुमास बन पतझर सिसकता था
कि जिसकी याद में दिनमान भी दिन-भर सिसकता था
कि जिसके लिए तुमने जलाए पंथ में दीपक
कि जिसकी याद में वातास रह-रहकर सिसकता था ।"[25]

एक तरफ पत्नी से वियोग की स्थिति है और दूसरी तरफ प्रकृति अपने उद्दीप्त रूप में कवि के वियोग व्यथा को बढ़ाने का कारक बनती है । 'मैं भी जलता रहा रात भर' शीर्षक कविता में कवि अपनी पत्नी वियोग की व्यथा को तीव्र भावुकता के साथ प्रकट करते हैं –

" दीपक जलते रहे गगन के मैं भी जलता रहा रात भर
पलकों के कोनों में थककर
चुप होकर बरसात पड़ी थी
नींद गगन में मौन खड़ी थी
दृग में कोई सुधि का सुन्दर स्वप्न मचलता रहा रात भर ।
मैं भी जलता रहा रात भर ।"[26]

पद्मजा घोरपड़े दुष्यंत कुमार की प्रेम भावना पर विचार करते हुए लिखते हैं–''विरह व्यक्ति को, व्यक्ति के मन को और व्यक्ति की अनुभूति–अभिव्यक्ति क्षमता को कितना–कितना माँजता है इसकी साक्षी कवि की ये विरह कविताएँ है ।''[27]

कवि दुष्यंत की प्रेम–भावना के बारे में विजय बहादुर सिंह लिखते हैं– ''दुष्यंत केवल एक रूप लोभी प्रणयी-भर नहीं , कवि भी थे और भावनाओं की गहराइयाँ और उनका मूल्य समझते थे ।''[28] वास्तव में कवि के लिए प्रेम एक साधना है । प्रेम व्यक्ति को नष्ट नहीं करता, अपितु उसका हृदय परिष्कृत कर उसका पुनर्निर्माण करता है । उसकी रचनात्मकता को नया आयाम और सौंदर्य प्रदान करता है । 'आ रही है मुझको तुम्हारी याद' ,'कौन तुम मेरे स्वरों में','सत्य सपनों का सुखद संसार' ,'तब याद मुझे करती होगी','क्या तुमको मेरी याद नहीं आती है' ,'मधुमास सही' ,'प्यार की पतवार','तुम्हारी याद में पागल प्रवासी लौट आया है' ,'ठहर जाओ' आदि कविताओं में प्रेम के आरोह-अवरोह के कई मार्मिक दृश्य देखने को मिलते हैं ।

अंतत: यही कहा जा सकता है कि दुष्यंत कुमार की वैयक्तिक प्रेम-भावना किशोरोचित भावुकता और रोमानी संवेदना से आपूरित है । कवि के बारे में यह प्रसिद्ध है कि वे रोमांटिक कविताएँ 'परदेशी' और 'विकल' उपनाम से लिखा करते थे । उनकी आरम्भिक प्रेमाभिव्यक्ति पर छायावादी प्रभाव दिखलाई पड़ता है । दुष्यंत कुमार के वैयक्तिक प्रेम संबंधी कविताएँ उनके निजी जीवन की ही

व्यथा-कथा है, जिसे कवि ने पूरी सच्चाई के साथ बिना किसी तामझाम के सीधे-सादे ढ़ंग से वर्णित किया है ।

देश-प्रेम

कवि दुष्यंत कुमार को अपने देश से बहुत प्रेम था । उनकी कई कविताओं में देश के प्रति उनका अगाध स्नेह झलकता है । वे अपने देश की एकता और अखंडता के लिए अपना तन-मन-धन सबकुछ न्यौछावर करने के लिए तत्पर दिखते हैं –

" आओ हम सब करें प्रतिज्ञा
जब तक हम हैं जीवित
भारत के चरणों में होंगे
तन मन धन सब अर्पित
हो निर्भीक देश की सेवा
सभी प्रकार करेंगे
उसके लिए जिएँगे, हम सब
उसके लिए मरेंगे ।"[29]

भारत देश उनके लिए उनका अभिमान है । भारत ज्ञान-विज्ञान, सभ्यता-संस्कृति, नैतिक मूल्य और शांति के लिए विश्व प्रसिद्ध रहा है । भारत के

बारे में कहा जाता है कि भारत दुनिया में साक्षात् स्वर्ग है । यहाँ के लोगों की वीरता, धैर्य, सहनशीलता, बुद्धि को देखकर दुनिया आश्चर्यचकित होती रही हैं किंतु वर्तमान स्थिति यह है कि भारत देश की प्राचीन वैभवपूर्ण पहचान कुछेक लोगों की स्वार्थवृत्ति के कारण धूमिल हो रही है और आज उसकी अस्मिता और पहचान संकटपूर्ण स्थिति में पहुँच चुकी है । फिर भी कवि आशांवित है कि भारत देश अपनी प्राचीन पहचान और अस्मिता को संकटपूर्ण स्थिति से उबारने में सफल होगा –

" किंतु अंतिम श्वास है ये विश्व की बर्बर निशा की,
आ रही निर्माण रेखाएँ नवल प्राची दिशा की,
है मुझे विश्वास होगा पुनः स्वर्णविहान मेरा ।
अमर है अभिमान मेरा ।"[30]

भारत देश कई सालों तक अंग्रेजो की निर्ममता से आक्रांत रहा । हमारे देश के कई लोगों ने इस निर्ममता से मुक्ति के लिए अपनी जान गँवा दी । कई वर्षों के पश्चात् हमें अंग्रेजो की इस निर्ममता से मुक्ति भी मिल गई, पर अब हम 'तथाकथित अपनों' की निर्ममता के शिकार होने लगे । अपने देश और देशवासियों से अगाध प्रेम करनेवाले कवि उनकी ऐसी दुर्दशा देखकर चुप न रह सके और प्रत्यक्ष होकर तत्कालीन सत्तारूढ़ सरकार पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने लगें –

" रौनके जन्नत जरा भी मुझको रास आई नहीं ,
मैं जहन्नुम में बहुत खुश था मेरे परवरदिगार ।"[31]

दुष्यंत कुमार की बहुत सारी कविताएँ ऐसी हैं जिसमें कवि तत्कालीन राजनीति दमन-चक्र से आक्रांत सामान्यजन की दुरावस्था देखकर तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं । कवि देश की दुर्दशा से क्षुब्ध दिखते हैं । वे भारतवासियों को प्रेरित करते हैं कि वे एकजुट होकर भारतदेश के गौरवशाली अतीत को पुनर्जीवित करने के लिए आगे आए । उसकी वैश्विक पहचान को धूमिल होने से बचाए । वे भारतवासियों को जागृत करते हुए लिखते हैं–

" यह सोने का काल नहीं है
जागो देश पुकार रहा है ।
कल–कल–कल कर नदी जगाती
सर–सर करके तीव्र प्रभंजन
धड़–धड़ करके मेघ जगाते
वर्षा करके रिमझिम–रिमझिम
आज तुम्हारे आगे देखो
हिमगिरि हाथ पसार रहा है ।"[32]

महात्मा गाँधी को लेकर लिखी गई कविताओं में भी उनका देश प्रेम ही उजागर होता है । 'आज युग का पथ–प्रदर्शक खो गया', 'सिंधु ने अपने हृदय

में ज्वार लाकर','अब सुमनों की भरमार कहाँ','वह भारत का भगवान','शोकगीत' आदि कतिपय रचनाओं में गाँधीजी के योगदान का स्मरण करते हुए कवि उनकी असामयिक मृत्यु को भारतवासियों के लिए बहुत बड़ी क्षति बताते हैं । गाँधीजी ने सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलकर भारत देश को मुक्त करवाने में जो अहम भूमिका अदा की, उसकी तुलना ही नहीं की जा सकती । समाज में व्याप्त अस्पृश्यता को दूर करने में गाँधीजी ने अपना जीवन त्याग दिया । कवि गाँधीजी से बहुत अधिक प्रभावित थे क्योंकि गाँधीजी की रगों में मातृभूमि का प्रेम प्रवाहित होता था –

" रूप मानव का धरे अवतार था
स्कंध पर निज राष्ट्र का ही भार था
जिस पे आश्रित राष्ट्र का उद्धार था
जिन रगों में मातृ भू का प्यार था "[33]

एक सच्चा राष्ट्र उद्धारक, युग का पथ-प्रदर्शक, साम्प्रदायिक एक्य का समर्थक, सामान्यजन का हितचिंतक अक्समात् इस दुनिया को अलविदा कह देता है, कवि इस आकस्मिक व्रजघात से आहत और शोकाकुल होकर लिखते हैं –

" यह कैसा भीषण वज्रपात,
सहसा हृदगति हो गई मौन
विश्वास नहीं होता इस पर

यह बार–बार कह रहा कौन

सो गया सदा के लिए आज

चिर अविनाशी सेगाँव

किस दुर्दिन में इस भारत की

मानवता का हो गया अंत "[34]

दुष्यंत कुमार भारत देश को 'गुलमोहर' सम्बोधित करते हैं और यह आकांक्षा अभिव्यक्त करते हैं कि –

" जिएँ तो अपने बगीचे में गुलमोहर के तले ,

मरें तो गैर की गलियों में गुलमोहर के लिए ।"[35]

देश के प्रति उनकी प्रेम-भावना को देखकर सरदार मुजावर लिखते हैं –"दुष्यंत कुमार अपने देश से बहुत प्यार करते थे । उसी के लिए मर–मिटना चाहते थे ।"[36]

निष्कर्षत: यही कहा जा सकता है कि देश दुष्यंत कुमार की संवेदना का अभिन्न अंग है । अपने देश के प्रति उनमें अगाध स्नेह और समर्पण का भाव है । अपने देश और देशवासिय ों से अगाध स्नेह होने के कारण ही वे देश की दुर्दशा करने वालों की खबर लेते हैं । उन्होंने अपनी कई रचनाओं में युद्ध के औचित्य–अनौचित्य पर प्रश्न उठाया है । इन प्रश्नों के मूल में देश और देशवासियों के प्रति उनकी चिंता दिखलाई पड़ती है । कवि देश के लिए अपना सर्वस्व समर्पण करने के लिए तैयार हैं ।

जन-प्रेम

दुष्यंत कुमार एक जनकवि है । समाज द्वारा अवहेलित, उपेक्षित और उत्पीड़ित साधारण जन के प्रति कवि–हृदय में प्रेम और करूणा कूट–कूट कर भरी हुई है । कवि ने लिखा भी है – "मेरे लिए मनुष्य-मात्र की अवमानना सबसे अधिक कष्टप्रद है । उस पर मेरी प्रतिक्रिया नितांत व्यक्तिगत ढ़ंग से होती है ।"[37] कवि ने लिखा भी है –

" तुम्हारी थकन ने मुझे तोड़ डाला,
तुम्हें क्या पता क्या सहन कर रहा हूँ ।"[38]

कवि सामान्य जन के प्रति पूरी तरह से प्रतिबद्ध हैं । यही वजह है कि उनपर होने वाले जुल्म के प्रतिवाद में वे अपनी गज़ल को अमानवीय, शोषक सल्तनत के विरोध में खड़ा करते हैं –

" मुझमें रहते हैं करोड़ों लोग चुप कैसे रहूँ ,
हर गज़ल अब सल्तनत के नाम एक बयान है ।"[39]

कवि ने समाज में एक ऐसी तहजीब को पनपते और विकास करते हुए देखा, जिसमें आम आदमी को भूनकर खाने का गहरा षड्यंत्र रचा जा रहा था । अपने निजी स्वार्थ की पूर्ति के लिए आम आदमी को कंधे की तरह इस्तेमाल किया जा रहा था । ऐसे जनविरोधी समय में जनकवि दुष्यंत कुमार जन जीवन की त्रासदी को दूर करने के लिए प्रतिबद्ध होते हैं । उनकी कविताओं का अधिकांश

अंश सामान्यजन के व्यथा–कथा को स्वर देती है । व्यवस्था के जन–विरोधी चरित्र को लेकर लिखी गई कविताओं में 'तीन दोस्त' ,'सूर्य का स्वागत', 'बेरोजगारी: एक अनुभूति' 'राह खोजेंगे', 'गौतम बुद्ध से', 'आश्वासनों का सूर्य' , 'उत्तरदाता' , 'जलता सच' , 'यात्रानुभूति ' , 'उपक्रम','कवि–धर्म','परिचित आवाज','सुबह : समाचार पत्र के समय', 'आत्मालाप', 'एक चुनाव परिणाम','कहाँ से शुरू करें यात्रा','ईश्वर को सूली' आदि कतिपय वे कविताएँ हैं, जिनमें कवि की जन–चेतना वृहत्तर स्तर पर चित्रित हुई है । अगर दुष्यंत कुमार के तीनों काव्य-संग्रहों –'सूर्य का स्वागत' ,'आवाजों के घेरे','जलते हुए वन का वसंत', गज़ल-संग्रह – 'साये में धूप' और गीति नाट्य–' एक कंठ विषपायी' का समग्र अवलोकन करें तो यही तथ्य उभरकर सामने आएगा कि कवि के सृजन के केंद्र में सामान्यजन और उनकी त्रासदी ही रही है । विजय बहादुर सिंह ने लिखा है –''इसकी कविताओं की विषय-वस्तु केवल भावावेगी प्रेम नहीं, देश और समाज की परिस्थितियों की चिंताओं का पता देती है ।''[40]

'जनता' नामक कविता में कवि जनता की दुरावस्था, उसकी वास्तविक उपयोगिता को रेखांकित करते हैं । प्राचीन काल से ही सत्तावर्ग अपने निजी स्वार्थ और सुरक्षा के लिए जनता को इस्तेमाल करता आ रहा है –

'' यह एक अखंड क्रम है

और उनके अजीब विश्वास हैं

उनके हाथों में बहुत सारे बाँस हैं

बाँसों पर बास

हहराते सागर की गहराई नापने के लिए ।''[41]

उनके समकालीन कवि धर्मवीर भारती लिखते हैं -''आखिर क्या था उन गज़लों में, जो इस तरह इतनी गहराई में झकझोर गया । सबसे बड़ी बात यह कि वे एक ऐसे आदमी की प्रामाणिक पीड़ाभरी आवाज थीं, जो अपने इस मुल्क को, अपनी इस दुनिया को बेहद प्यार करता रहा है ।''[42]

दुष्यंत कुमार हिन्दी साहित्य के उन कवियों में स्थान रखते हैं, जो अपने देश और देशवासियों के प्रति अपने कर्तव्य को क्षण भर के लिए भी विस्मृत नहीं करते हैं । जिनका प्रेम वैयक्तिकता की संकुचित सीमा में आबद्ध न रहकर देश और देशवासियों के दुख:-दर्द के साथ तदाकार हो गया है । विजय बहादुर सिंह इसे दुष्यंत कुमार के चरित्र की विलक्षणता और सबसे बड़ी खूबी मानते हैं – ''दूसरों की तकलीफ उसको इस हद तक कचोटती रही है कि खुद अपनी तकलीफों के बारे में सोचने-विचारने की उसे फुरसत ही नहीं मिली ।''[43]

निष्कर्षत: दुष्यंत कुमार की प्रेम-भावना वैयक्तिक होते हुए भी सामाजिक अधिक है । समाज का दुख, समाज में रहनेवाले अवहेलित सामान्यजन का दुख कवि को बेचैन करता है और स्वत: उनपर कवि का ममत्व न्यौछावर होने लगता है । उनकी प्रेम भावना में आत्मीयता दिखलाई देती है । वियोग की असह्य

पीड़ा सहने के बावजूद कवि टूटते नहीं है । उनके प्रेम में कुंठा का लेशमात्र भी नहीं है । उनका प्रेम भावुकतापूर्ण है । जितने गम्भीर वे निजी प्रेम के प्रति रहे हैं, उतने ही गम्भीर देश और जन के प्रति भी रहे हैं ।

2.सौंदर्य

सौंदर्य मूलत: आकर्षण है । यह आकर्षण किसी व्यक्ति के प्रति भी हो सकता है और किसी वस्तु के प्रति भी । प्रकृति की असीम और अपूर्व सम्पदा देखकर भी कोई आकर्षित हो सकता है, तो देश की अनुपम सभ्यता और संस्कृति ही किसी को अभिभूत करती है । वास्तव में सौंदर्यानुभूति एक मानसिक वृत्ति है । मनुष्य स्वभावत: सौंदर्योपासक होता है । अगर वह मनुष्य एक सर्जक है तो फिर उसमें सौंदर्यबोध का होना स्वाभाविक है । हिन्दी साहित्य के आरम्भिक युग में स्त्री–सौंदर्य ने कवियों को आकर्षित किया तो आधुनिक साहित्य में स्त्री के साथ–साथ प्रकृति और श्रम के सौंदर्य ने कवियों को अपनी ओर खींचा । आधुनिक युग में सौंदर्य की नई परिभाषा निर्मित हुई । और साथ ही यह चर्चा भी जोर पकड़ने लगी कि वास्तव में सुन्दर किसे कहा जाये । एक तरफ 'श्रद्धा' का आभिजात्यवादी सौंदर्य है तो दूसरी तरफ निराला की 'पत्थर तोड़ती युवती' का अनाभिजात्यवादी सौंदर्य । आधुनिक काल में सौंदर्य की पारम्परिक अवधारणा को

नकारा गया खासकर प्रगतिशील कवियों के द्वारा । इन कवियों ने सौंदर्य की नई अवधारणा स्थापित की ।

रामविलास शर्मा सौंदर्य के बारे में लिखते हैं –''सौंदर्य की वस्तुगत सत्ता है । यह सत्ता प्रकृति में है, मानवजीवन और मनुष्य की चेतना में है । सौंदर्य इंद्रियबोध तक सीमित नहीं है, उसकी सत्ता मनुष्य के भावजगत और उसके विचारों में भी है ।''[44]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है – ''कुछ रूप–रंग की वस्तुएँ ऐसी होती हैं जो हमारे मन में आते ही थोड़ी देर के लिए हमारी सत्ता पर ऐसा अधिकार कर लेती है कि उसका ज्ञान ही हवा हो जाता है और उन वस्तुओं की भावना के रूप में ही परिणत हो जाते हैं । हमारी अंतस्तता की यही तदाकार–परिणति सौंदर्य की अनुभूति है ।''[45] कविता में सौंदर्य–चित्रण के बारे में वे लिखते हैं –''कविता केवल वस्तुओं के ही रंग–रूप में सौंदर्य की छटा नहीं दिलाती, प्रत्युत कर्म और मनोवृत्ति के भी अत्यंत मार्मिक दृश्य सामने रखती है ।''[46]

छायावादी कवि कविवर पंत जहाँ सौंदर्य को 'सकल ऐश्वर्य की संधान' घोषित करते हैं, तो उनके ही समकालीन प्रेम और सौंदर्य के कवि कहे जाने वाले जयशंकर प्रसाद सौंदर्य को 'चेतना का उज्ज्वल वरदान' मानते हैं ।

सौंदर्य एक आंतरिक अनुभूति है । इस अनुभूति को किन्हीं विशेष

परिस्थितियों में ही अनुभूत किया जा सकता है । संसार की हरेक व्यक्ति, वस्तु या विचार हमें प्रभावित नहीं करती । किंतु कुछ व्यक्ति, वस्तु और विचार ऐसे होते हैं जो हमारे मन–मानस को पूरी तरह से सम्मोहित कर लेते हैं । हमें उनमें कुछ विलक्षणता दृष्टिगत होने लगती है । हम सहज भाव सें उस ओर आकृष्ट होने लगते हैं क्योंकि वह हमें सुन्दर लगता है, सबसे पृथक लगता है, सबसे खास लगता है । यही सौंदर्यानुभूति है और वह विलक्षणता ही सौंदर्य है ।

आधुनिक कवियों की सौंदर्य–दृष्टि वैविध्यपूर्ण और व्यापक है । वे प्राचीन कवियों की तरह स्थूल सौंदर्य को महत्त्व नहीं देते हैं । उनकी सौंदर्य-दृष्टि सूक्ष्म है । आधुनिक कवियों की सौंदर्य-दृष्टि स्त्री के नख–शिख तक ही केंद्रित नहीं है । आधुनिक कवि नारी के आंतरिक-सौंदर्य को भी महत्त्व देते हैं । प्रकृति का सौंदर्य, जीवन और जगत के बहुविध क्रिया-व्यापारों का सौंदर्य आधुनिक कवि की तूलिका से साक्षात् हुए हैं । कवि दुष्यंत कुमार के काव्य में हमें सौंदर्य के कई चित्र उपलब्ध होते हैं । उनके काव्य में मानवीय सौंदर्य चित्र के अलावा प्रकृति और श्रमशील सौंदर्य का अंकन बड़े ही सुन्दर ढ़ंग से हुआ है ।

प्राकृतिक सौंदर्य

प्रकृति के असीम सौंदर्य ने कवियों को हमेशा से आकृष्ट किया है । अपने भावों को अभिव्यक्त करने के लिए कवियों ने प्रकृति का सहारा लिया है ।

हिन्दी साहित्य के कई कवि तो अपने प्रकृति-प्रेम के लिए ही जाने जाते हैं । छायावादी कवि पंत को प्रकृति का कवि ही मान लिया गया है । उनके काव्य में प्रकृति अपनी सभी भाव–भंगिमा के साथ प्रस्तुत है । नई कविता में प्रकृति के सौंदर्य का सुन्दर अंकन हुआ है । यहाँ प्रकृति का वैभवशाली रूप दिखाई नहीं पड़ता । प्रकृति यहाँ मानवीय जीवन यथार्थ के साथ संयुक्त हो गई है । कवि दुष्यंत कुमार के काव्य में प्रकृति सौंदर्य के कई चित्र चित्रित हुए हैं । प्रकृति का असीम सौंदर्य कवि को स्वर्ग की अनुभूति कराता है, प्रकृति के सानिध्य में मनुष्य केवल पाता ही है, खोता कुछ नहीं –

" ये विपुल सौंदर्य इसको स्वर्ग

या कुछ भी कहो "[47]

'स्वर्ग' का अनुभव कराने वाली प्रकृति दुष्यंत कुमार के काव्य–जगत में नाना रूप-रंग और भाव-भंगिमा धारण करके आई है । वे अधिकतर प्रकृति को मानवीय रूप में चित्रित करते हैं । उनके काव्य-जगत में प्राकृतिक सौंदर्य चित्रों की मात्रा बहुत ज्यादा नहीं है, परंतु जो थोड़े–बहुत है, उनमें एक आकर्षण है । कहीं-कहीं तो प्रकृति के सौंदर्य का अंकन करते-करते वे सामाजिक बुराईयों और विडम्बनाओं को चित्रित कर देते हैं । कहा जा सकता है कि प्राकृतिक सौंदर्य अंकन में भी कवि की सामाजिक यथार्थदृष्टि परिलक्षित होती है । उदाहरण के तौर पर उनका यह शे'र देखा जा सकता है –

" एक चादर साँझ ने सारे नगर पर डाल दी,
यह अँधेरे की सड़क उस भोर तक जाती तो है ।"[48]

कवि साँझ के बाद के अँधेरे को मिटते हुए भोर की ओर जाते हुए देखते हैं । 'अँधेरे की सड़क का उस भोर तक जाना' जनविरोधी सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन की आशा का सूचक है । दुष्यंत कुमार ने अपनी अधिकांश गज़लों में प्राकृतिक सौंदर्य के माध्यम से सामाजिक यथार्थ को ही वर्णित किया है । इसी तरह बारिश में तालाब जब जल से परिपूर्ण हो जाती है तब तालाब का सौंदर्य द्विगुणित हो जाता है । दुष्यंत कुमार लिखते हैं –

" एक तालाब-सी भर जाती है हर बारिश में ,
मैं समझता हूँ ये खाई नहीं जाने वाली ।"[49]

यहाँ कवि प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से सत्तावर्ग के आश्वासनों की सच्चाई को अनावृत करते हैं । 'खाई के बने रहने' का आशय यही है कि राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक असमानता समाज से कभी भी मिटनेवाली नहीं है, भले ही आश्वासनों में उन्हें बार–बार जड़ से मिटाने की बात ही क्यों न की जाए । उनकी 'सूर्य का स्वागत' शीर्षक कविता भी प्रकृति के मानवीय रूप को दर्शाती है । सूर्य को कवि आशा के प्रतीक के रूप में चित्रित करते हैं । चिकनी, काली और सीलन भरी दिवार पर सूर्य को चढ़ते हुए देख कवि को असीम सौंदर्य की अनुभूति होती है । कवि इस सौंदर्य से अभिभूत होकर उसके स्वागत-सत्कार के लिए दौड़

पड़ते हैं –

" आँगन में काई है,
दीवारें चिकनी हैं, काली हैं,
धूप से चढ़ा नहीं जाता है,
X X X
पर तुम आए हो–स्वागत है !
स्वागत!...घर की इन काली दीवारों पर !"[50]

कवि प्रकृति को 'लज्जा' जैसे कोमल मानवीय भावों से सुसज्जित कर नई मनमोहक भंगिमा प्रदान करने में अत्यंत सफल हुए हैं । कवि हवा को एक सलज्ज लड़की के रूप में चित्रित करते हैं जो अपने स्वजनों को छोड़कर विदा नहीं होना चाहती । वह अपनी आकांक्षा को शालीनता के साथ अपने पिता के सम्मुख रखती है । उसकी आकांक्षा जानकर पिता विदाई का प्रसंग टाल जाते हैं । कवि ने प्रकृति सौंदर्य के साथ–साथ भारतीय नारी की छवि को बहुत ही सुन्दर तरीके से वर्णित किया है –

" एक शोख वय वाली लड़की-सी हवा
इधर–उधर कपड़े झटकती हुई
आँगन बुहारती है ।
'थोड़े दिन और अभी रहने दो'

सलज कोयलिया बोल मारती है ।

वृद्ध–वृक्ष, गर्दन हिलाते हैं

पिता–पर्वत

काली-सी चादर में मुँह लपेट

विदा का प्रसंग टाल जाते हैं ।''[51]

कवि को लगता है कि व्यक्ति के विकास में प्रकृति की भूमिका हमेशा से महत्त्वपूर्ण रही है । प्रकृति की गोद में असीम शांति है । प्रकृति का सानिध्य व्यक्ति को तनाव रहित कर उसमें नवीन उर्जा और उत्साह का संचार करता है । ऊँचे शिखरों की मनोहारी सुषमा व्यक्ति के तन और मन दोनों को अवसाद रहित कर असीम आन्नद की अनुभूति कराती है । कवि ऊँचे शिखरों की सुन्दरता के साथ-साथ उसके जुझारूपन और कल्याणकारी स्वरूप से आकर्षित होकर लिखते हैं –

'' लिपटाए हरियाली तन से

प्रमुदित स्थिर आलिंगन से

गर्वित हो देख रहे जग को

हर्षित हो अपनी किस्मत पर

ये ऊँचे शैल शिखर सुन्दर

निश्चलता अपने साथ लिए

अवसाद मिटाता है उसका

जो आता निर्झर के तट पर "[52]

'फूल ये कमल के' शीर्षक कविता में कवि कमल फूल को जल का मालिक सम्बोधित करते हुए उसके अपूर्व सुन्दरता का वर्णन करते हैं –

" मालिक हैं जल के

फूल ये कमल के

किरनें उतरीं तो पहले इनके घर आई

इंद्रधनुष के रंगों की छवि इन पर छाई

पहले ये जागे फिर भौंरे रस पागे

गन–गन स्वर छलकी

फूल ये कमल के "[53]

दुष्यंत कुमार ने अपनी कविताओं प्रकृति के सौंदर्य का मनोहारी अंकन किया है । उनकी कविताओं में प्रकृति का कोमल रूप दिखाई पड़ता है । प्रकृति में सर्वत्र मनुष्य को आनन्दानुभूति कराने वाला सौंदर्य विद्यमान है । इस सौंदर्य के आनन्द को महसूस करने के लिए व्यक्ति को प्रकृति की शरणागति में जाना होगा । प्रकृति उपचारिका की भूमिका भी निभाती है । प्रकृति व्यक्ति को शारीरिक और मानसिक आरोग्य प्रदान करता है । इसीलिए कवि तपेदिक के रोगियों को प्रकृति के सानिध्य में जाने के लिए कहते हैं –

" ओ तपेदिक के मरीजों !

तुम अगर आए न हो

तो कभी आओ

यहाँ आकर पहाड़ों में रहो "[54]

कवि 'ओ बुलबुल' शीर्षक कविता में गीत गाती हुई बुलबुल की क्रियाशीलता देखकर और मनमोहक गीत सुनकर अचम्भित है । उत्सुकतावश कवि बुलबुल से प्रश्न करते हैं –

" इस पेड़ से उस पेड़ पर जाती हुई

हँसती हुई

गाती हुई-ओ बुलबुलो !

बोलो कहाँ है प्रेरणा का स्रोत, इस संगीत का

जो गा रही भरकर स्वरों में क्षीण

चिंताहीन तुम "[55]

प्राय: कवियों ने प्रकृति का अंकन करते हुए चाँदनी रातों पर अपनी लेखनी चलाई है । कवि दुष्यंत कुमार भी चाँदनी रात में चाँद के सौंदर्य का वर्णन करते हैं । रात की समाप्ति और प्रात:काल के आगमन का जो सौंदर्य चित्र कवि ने खींचा हैं, वह बरबस अपनी ओर खींचता है –

" अम्बर के काले आँचल में

चंद्र छिपा मुख, मौन सो गया,

धीरे हटा तिमिर अवगुंठन

ऊषा ने अपना मुख खोला,

सरमित ढलता जीवन उसका

यों रवि के यौवन से बीता ।''[56]

प्रकृति के बदलाव का मानवीय क्रिया-कलापों पर भी प्रभाव पड़ता है । प्रकृति के उद्दीप्त सौंदर्य से प्राचीन कवि अत्यंत प्रभावित रहे । आधुनिक कवियों ने भी प्रकृति के उद्दीप्त सौंदर्य के प्रभाव को सुन्दर ढ़ंग से वर्णित किया है । दुष्यंत कुमार प्रकृति के उद्दीप्त सौंदर्य का चित्र खींचते हैं –

'' जब बूँदों में आकाश उतर आता है,

जब धरती पर मधुमास उतर आता है,

जब किसी वियोगी के सूखे अधरों पर

फिर से वह खोया हास उतर आता है

तब आँखों में सावनी मेघ छा जाते

इस व्यथित हृदय की पीड़ा बढ़ जाती है ।''[57]

इस तरह कहा जा सकता है कि कवि ने प्रकृति का सौंदर्याकन बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से किया है । कवि के यहाँ प्रकृति का उपयोगितावादी सौंदर्य देखने को मिलता है । प्रकृति के सौंदर्य को निहारते हुए भी कवि मानवीय संवेदना से

आपूरित दिखते हैं । उनके यहाँ प्रकृति का परम्परागत रूप कम देखने को मिलता है । उनके यहाँ प्रकृति के सहज सौंदर्य का अंकन हुआ है ।

मानवीय सौंदर्य

दुष्यंत कुमार के काव्य में मानवीय सौंदर्य के कई चित्र दृष्टिगत होते हैं । मानवीय सौंदर्य के अंतर्गत स्त्री और पुरूष के शारीरिक और आंतरिक सौंदर्य का अंकन किया गया है । नारी के शरीर की सुडौलता, उसके नयनों का आकर्षण कवि को मंत्रमुग्ध करता है । नारी के शारीरिक सौंदर्य का कवि हृदयस्पर्शी वर्णन करते हैं –

" था सुडौल औ' गोरी बाँहों का कैसा विस्तार
निठुर के थे कैसे भुजपाश कि मेरी देह
निबल औ' क्षीण हो गई
और नयन, क्या कहूँ देखकर हुए उन्हें निश्चेत
नहीं तनिक भी रह पाया था लोक-लाज का ध्यान मुझे
डूब गया था ज्यों जल में जलयान
वात में दीप बुझे "[58]

'दो पोज' कविता में कवि ने सद्यस्नाता नारी के केशों का मनोहारी अंकन किया है –

" पर जब तुम
केश झटक देती हो अनायास
तारों-सी बूँदें
बिखर जाती हैं आसपास "[59]

दुष्यंत कुमार की एक प्रसिद्ध कविता है 'दो लाज भरे सुरमई नयन' । इस कविता में कवि नवपरिणीता पत्नी श्रीमती राजेश्वरी त्यागी के अपूर्व रूप सौंदर्य का चित्ताकर्षक अंकन करते हैं । नवपरिणीता पत्नी का अपूर्व सौंदर्य कवि को पूरी तरह से वशीभूत कर लेता है । विवाह के दूसरे दिन लिखी गई इस कविता में कवि लिखते हैं –

" नूपुर ध्वनि-सी रून-झु-रून-झुन
करती आई दृग के पथ में
वह चपल बालिका भोली थी
कर रही लाज का भार वहन
झीने घूँघट पट से चमके
दो लाज भरे सुरमई नयन ।"[60]

दुष्यंत कुमार नारी के बाह्य सौंदर्य को देखकर ही मंत्रमुग्ध नहीं होते अपितु उन्हें नारी का आंतरिक सौंदर्य भी आकर्षित करता है । उसकी लज्जाशीलता, उसकी सौम्यता, उसकी कोमलता, उसका निश्छल स्नेह कवि के हृदय पर अमिट प्रभाव

डालती है । 'पत्नी के प्रति' कविता में हम इसे देख सकते हैं । कवि लिखते हैं –

" दृग उत्पल रूपी सतरंगे कजरारे बादल
अधरों में मधु की गहराई, सागर का जल
वर्ण कि जैसे राका की रश्मियाँ समुज्ज्वल
संसृति व्यापी रूप तुम्हारा तन का घेरा
बोलो किन तत्त्वों से निर्मित प्राण तुम्हारा
बोलो किन तत्त्वों से निर्मित स्नेह सितारा
जो पग-पग पर प्रेयसि मुझको दिया सहारा
ज्योतिर्मय कर दिया पंथ पर घिरा अँधेरा ।"[61]

इसी तरह जब वे पुरूष सौंदर्य के अंतर्गत भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के शारीरिक सौंदर्य का वर्णन करते हैं तब उनकी दृष्टि बापू के आंतरिक सौंदर्य पर ठहर जाती है । वे बापू के आंतरिक सौंदर्य का चित्र खींचते हुए लिखते हैं –

" अस्थि का कंकाल फिर भी शक्तिमय
वृद्ध एवमा शुष्क फिर भी ज्योतिमय
नेत्र थे कुछ क्षीण फिर भी अग्निमय
था अरे कृश कंठ फिर भी ओजमय "[62]

अस्तु, यही कहा जा सकता है कि कवि ने अपनी कविताओं में मानवीय सौंदर्य के मनमोहक चित्र खींचे हैं ।

श्रमशील-सौंदर्य

दुष्यंत कुमार ने अपनी कविताओं में श्रमशील सौंदर्य का अंकन किया है । जहाँ एक तरफ कवि प्रेमिका और प्रकृति के अपूर्व सौंदर्य से विस्मित है, वहीं दूसरी तरफ वे श्रमशील किसान के दीन, जर्जर शरीर में अद्‌भूत सौंदर्य देखते हैं । कवि ने 'गौतम बुद्ध से' शीर्षक कविता में लिखा है कि वे 'भूखी मानवता के कवि और जर्जर जनता के उद्‌घोषक' है । अपने को सामान्यजन से सम्पृक्त करनेवाले कवि दुष्यंत का जर्जरित और तथाकथित असुन्दर सौंदर्य से अभिभूत होना स्वाभाविक ही है । 'किसान' शीर्षक कविता में कवि किसान के सौंदर्य का सजीवांकन करते हैं –

" गतिहीन, दीन, जर्जर शरीर
मुख पर चिंता की लिए छाप
युग-युग से सोया आँख मूँद
सोया हो ज्यों कालुष्य पाप "[63]

प्रगतिशील कवि नागार्जुन की भाँति कवि दुष्यंत कुमार को आमजन का सौंदर्य सहज आकर्षित करता है । पेट भरनेवाले किसान की काया अन्नाभाव से जर्जरित और दुर्बल है, फिर भी कवि को उसमें आकर्षण दिखता है क्योंकि यह दुर्बल और जर्जरित शरीर करोड़ों लोगों की क्षुधापूर्ति का कारक है । इसी तरह कवि चट्टानों पर पड़े छाप को देखकर आनन्दित होते हैं । यह छाप बनावटी नहीं,

यह उन मजदूर के पैरों की छाप है जो बोझा लादकर चट्टानों पर चढ़ते हैं । कवि इस श्रमशील सौंदर्य का खूबसूरती से अंकन करते हैं –

" चट्टानों पर खड़ा हुआ तो छाप रह गई पाँवों की,
सोचो कितना बोझ उठाकर मैं इन राहों से गुजरा ।"[64]

कवि को श्रम करनेवालों का सौंदर्य, उनके घोर संघर्ष के कारण खींचता है । किसान-मजदूर के श्रम-सौंदर्य को चित्रित करते हुए कवि उनके कटु–त्रासदायक जीवन की विडम्बना को भी सहज अनावृत्त कर देते हैं । मजदूर के 'सूखे पपड़ी पड़े हुए होंठ' उनके कभी खत्म होने वाले कठोर श्रम की व्यथा को ही उजागर करते हैं –

" लेकिन कुछ हाथ इसी जमीन में
जिन्दगी भर खुदाई करते रहे
और कुछ सूखी पपड़ियों वाले होंठ
पानी-पानी चिल्लाते हुए
खामोश हो गए ?"[65]

कवि दुष्यंत कुमार की कविताओं में सौंदर्य चित्र के आधार पर यही कहा जा सकता कि उनकी सौंदर्य-दृष्टि यथार्थ चेतना से अनुप्राणित है । सौंदर्याकन में भी उनकी दृष्टि समाज में व्याप्त सच्चाईयों पर ही रही है । उनकी सौंदर्य-दृष्टि उदार और व्यापक है । वह कल्पित न होकर स्वानुभूत सत्य पर आधारित है ।

3. प्रशंसात्मक कविताएँ

दुष्यंत कुमार के काव्य जगत में एक विशेष पहलू देखने को मिलता है । उन्होंने कई महान हस्तियों की प्रशंसा की है । उनके सामाजिक प्रदेय एवं जनहित की चिंता देखकर कवि अभिभूत है । राजनीतिक व्यक्तित्वों में कवि जहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी और 'आजाद हिन्द फौज' के संस्थापक नेताजी सुभाषचंद्र बोस की प्रशंसा करते हैं, वहीं साहित्यिक व्यक्तित्वों में गोस्वामी तुलसीदास और महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के सामाजिक और साहित्यिक प्रदेय को स्मृत कर, मुक्त कंठों से उनकी प्रशस्ति करते हैं ।

भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की प्रशंसा करते हुए दुष्यंत कुमार ने कई कविताएँ लिखी हैं । भारत देश को विदेशी दासता से मुक्त कराने में महात्मा गाँधी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । 'सत्य और अहिंसा' रूपी हथियार से गाँधीजी ने भारतवासीयों को विदेशी दासता से मुक्त कराया । यह मुक्ति एक समय अकल्पनीय थीं किंतु बापू की दृढ़ता और जन-समर्पण ने मुक्ति की कल्पना को हकीकत में परिवर्तित कर दिया । गाँधीजी ने केवल विदेशी सत्ता से ही मुक्ति नहीं दिलवाई बल्कि भारतीय समाज में व्याप्त मानवविरोधी सभ्यता और संस्कृति पर भी कुठाराघात किया और समाज में समता स्थापित करने के लिए संघर्षशील रहें । वे सच्चे अर्थो में समाज के शोषित और उपेक्षित जनों के सच्चे हितैषी थें । वे मानव-मात्र के कल्याण के लिए समर्पित थे । कवि को लगता है कि गाँधीजी के

चिंतन के केंद्र में केवल मानव-मात्र के लिए ही चिंता समाहित थी । गाँधीजी ने समाज से संकीर्णता हटाने के लिए अपना तन-मन न्यौछावर कर दिया । बापू ने दिशाहीन भारतवासियों को पथ दिखाया । वे युग के पथ-प्रदर्शक थे –

" जिसकी भृकुटी से जन–जन की
तलवारें छूटा करती थीं
जिस मधुर कंठ से अमृत की
फव्वारें फूटा करती थीं
वह शक्ति पुंज ,वह ज्ञान कुंज, संबंध
तोड़कर चला गया "[66]

गाँधीजी ने समाज में सद्भाव और एकता स्थापित करने की चेष्टा की । मानव-मानव के बीच प्रेम और भाईचारा का पाठ सिखाया । उन्होंने अपनी कई कविताओं में बापू के योगदान की प्रशंसा की है । कवि बापू की सामाजिक चेतना के बारे में लिखते हैं –

" रूप मानव का धरे अवतार था
स्कंध पर निज राष्ट्र का ही भार था
जिस पे आश्रित राष्ट्र का उद्धार था
जिन रगों में मातृ भू का प्यार था "[67]

'आज युग का पथ–प्रदर्शक खो गया','सिंधु ने अपने हृदय में ज्वार लाकर','यह

बार–बार कह रहा कौन' ,'वह भारत का भगवान' ,'अब सुमनों की भरमार कहाँ', 'इस दिन सारा जग रोया था' आदि कविताएँ बापू के अविस्मरणीय योगदान को दर्शाती है । कवि ने बापू के लिए 'भारत का भगवान','भारत की नौका का नाविक', 'युग का पथ-प्रदर्शक' आदि सम्मानीय सम्बोधन प्रस्तुत किये हैं ।

'आजाद हिन्द फौज' के संस्थापक सुभाषचंद्र बोस ने कवि को प्रभावित किया था । सुभाषचंद्र बोस की प्रशंसा में दुष्यंत कुमार ने 'हे भारत जननी के किरीट' शीर्षक से एक कविता लिखी है । उनपर लिखी गई इस एकमात्र कविता में कवि दुष्यंत कुमार उनकी देश-भक्ति की प्रशंसा करते हैं । देश को आजादी दिलाने में उनकी सेना का अहम योगदान रहा । इसी योगदान की चर्चा करते हुए कवि लिखते हैं –

" हे भारत जननी के किरीट
तुमको है शत-शत नमस्कार
जब घोर अमाँ की रातें थीं
काली-काली बरसातें थीं
हम चलने में घबराते थे
जब चली झंझावतें थीं
तब तुमने नभ-कालिख धोकर
था खोल दिया नभ प्रात-द्वार "[68]

वैविध्य के कवि महाप्राण निराला हिन्दी के एक जीवट रचनाकार थे । वे क्रांतिकारी व्यक्तित्व के धनी थे । सामाजिक और साहित्यिक रूढ़ियों को नकारने का जो अपरिमित साहस निराला में देखने को मिलता है, वह शायद ही उनके समकालीनों में दिखता हो । उनकी कविताओं ने आने वाले कवियों का मार्गदर्शन किया । उन्हें खुलकर भावाभिव्यक्ति का मौका दिया । आज जिस मुक्तछन्द को रचनाकार अपनी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम मानते हैं, उस मुक्त छन्द में रचना करने पर कवि निराला की काफी आलोचना हुई । कई आलोचकों ने उसे 'रबर छन्द', 'केंचुआ छन्द' जैसे विशेषणों से विभूषित किया और कवि का मजाक उड़ाया । किंतु निराला स्वयं में निराले थे । युगीन आलोचना से वे कभी भी विचलित नहीं हुए । जितनी अधिक उनकी आलोचना हुई, कथ्य और शिल्प और अधिक सशक्त होते गये । कवि दुष्यंत कुमार ने महाप्राण निराला की प्रशस्ति में 'निराला' शीर्षक से एक कविता लिखी है । इस एक कविता में दुष्यंत कुमार ने निराला के विलक्षण व्यक्तित्व और कृतित्व को हमारे समक्ष विराट् रूप में प्रस्तुत कर दिया है । कवि निराला की दृढ़ता, अविचल, अविरत साधना की प्रशंसा करते हुए दुष्यंत कुमार लिखते हैं –

" अविरल सतत तुम
साधना में रत तुम
हिले नहीं फिरे नहीं

डरे नहीं गिरे नहीं "[69]

निराला ने हिन्दी साहित्य को 'राम की शक्ति-पूजा','सरोज-स्मृति','जूही की कली', 'कुकुरमुत्ता', 'भिक्षुक', 'विधवा' जैसी अनोखी और सामाजिक यथार्थ से युक्त रचनाओं से समृद्ध किया । 'सरोज-स्मृति' में कवि जहाँ एक ओर तटस्थ भाव से अपनी एकमात्र पुत्री की कारूणिक मृत्यु से उत्पन्न शोक का वर्णन करते हैं, वही समाज में व्याप्त जातिगत रूढ़ियों पर कुठाराघात भी करते हैं । स्वयं एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण होकर समजातिवालों पर बेपरवाह, बेखौफ व्यंग्य कसना कवि निराला के ही बूते की बात थी । इसीलिए कवि दुष्यंत कुमार लिखते हैं –

"पंथ के खोबों से
दुबे और चौबों से,
बढ़ते गए आठ पहर
चढ़ते गये गिरि गह्वर "[70]

निराला ने समाज को नया दृष्टिकोण प्रदान किया । सामाजिक बंधन के साथ-साथ, साहित्यिक बंधन को तोड़कर साहित्याभिव्यक्ति को सहज और सरल बनाया । भाषागत रूढ़ियों को तोड़नेवाला 'मुक्त छन्द' निराला का हिन्दी साहित्य-संसार को दिया गया अमूल्य और अतुलनीय उपहार है । आज की विराट और वैभवपूर्ण हिन्दी साहित्य सम्पदा इसी पर अवस्थित है । दुष्यंत कुमार लिखते हैं – " बसा सके नई धरा

कि तोड़कर परंपरा

नए विचार रीति से

नए दुलार प्रीति से

कठोर हो दुलारकर

पुकारकर सुधारकर

बना लिया नया गगन

नई लगन नए नयन

नवीन दृष्टिकोण से

जहाँ देखते रहे "[71]

निराला के बारे में रामविलास शर्मा ने लिखा है –"साहित्य और समाज में कौन ऐसा निहित स्वार्थ है जिसे निराला से भय न हुआ हो ? नायिका-भेद के उपासक पुरातनपंथी कवि, जातिप्रथा के सहारे जीने वाले धर्मध्वज पंडे-पुरोहित, सामंतों और पूँजीपतियों के दलाल, सभी इस व्यक्तित्व से चौकन्ने थे । "[72] निराला के चरित्र की इसी अद्वितीयता से दुष्यंत कुमार प्रभावित थे –

" न दुःख तुझे रूला सका

न सुख तुझे सुला सका

कि हार–हारकर थके

तुम्हें न पर समझ सके

सदय करूण इंसान हो

खुद आप में भगवान हो "[73]

दुष्यंत कुमार ने निराला को 'नववधू हिन्दी की माँग की लाली' संबोधन कर उनके अमूल्य अवदान की ओर इशारा किया है । कवि को लगता है कि निराला 'भाषा की नाज' और 'हिन्दी के प्राण' है । उनके साहित्य के बिना हिन्दी का साहित्य संसार कंगाल और अनाथ है । निराला महज एंक कवि नहीं हिन्दी के सबसे बड़े कवि और सबसे अधिक मान्य-पूज्य व्यक्तित्व थे । दुष्यंत कुमार ने निराला के ऊपर 'निराला:एक याद,एक उत्सव' नाम से एक लेख भी लिखा है ।

दुष्यंत कुमार ने अपने रचना-संसार में भक्तिकाल के महान्तम कवि गोस्वामी तुलसीदास को स्थान दिया है । तुलसीदास का अभिनन्दन करते हुए कवि ने 'ओ अमर गायक करो स्वीकार अभिनन्दन' शीर्षक से एक कविता लिखी है । कवि ने उन्हें 'देव का अवतार', 'पावन ज्योति' आदि कहकर सम्बोधित किया है । तुलसीदास ने राम-भक्ति की अजस्र धारा प्रवाहित कर हताश हिन्दू–जाति में नवीन आशा और उत्साह का संचार किया । तुलसीदास ने समाज में व्याप्त नैतिक अवमूल्यन को मिटाने के लिए आदर्श और मर्यादा की स्थापना की । उनके आदर्श चरित्र समाज और परिवार में बढ़ रही विशृंखलता को दूर करने में सहायक है । तुलसीदास कृत ग्रंथ 'रामचरित मानस' हिन्दुओं का पवित्र ग्रंथ माना जाता है । तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में सामाजिक यथार्थ को अंकित किया है । गउनके

'रामराज्य' की परिकल्पना में समाज के सभी वर्ग का कल्याण विन्यस्त है । महाकवि की प्रशंसा करते हुए दुष्यंत कुमार लिखते हैं –

" इस धरा पर तुम अमा में चाँद बन उतरे
भक्ति का सौभाग्य पहिने ज्ञान के गजरे
क्या हुआ यदि स्वर्ग में तुम हो नहीं जग में
ध्वनि तुम्हारी तो ध्वनित है आज तक मग में
गूँजते हैं आज भी जग में वही स्वन ।
ओ अमर गायक करो स्वीकार अभिनन्दन ।"[74]

कवि अपने जीवन में अनेक लोगों से प्रभावित हुए । उनकी समाज और जन-सचेतंता ने कवि के मर्म का संस्पर्श किया । कवि इन महान् व्यक्तिव के प्रति श्रद्धारत है और अपनी श्रद्धा को उनकी प्रशस्ति कर व्यक्त करते हैं । जहाँ महात्मा गाँधी और सुभाषचंद्र बोस भारतीय इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं, वहीं गोस्वामी तुलसीदास और महाप्राण निराला के बिना हिन्दी साहित्य अधूरा और आधारहीन है । इन महान विभूतियों के प्रति अपने हृदयस्थ सहज एवं सरल उद्‌गारों को कवि ने मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त किया है ।

समग्रतः दुष्यंत अनुभूतियों के कवि हैं । उनके अनुभव का दायरा व्यापक है । उनकी कविताओं में युग जीवन का भयावह यथार्थ भी है और प्रेम एवं सौंदर्य जैसे कोमल भाव का अंकन भी । प्रेम और सौंदर्य से संबंधित कविताओं में

कवि का भावुक रूप दृष्टिगत होता है । उनकी प्रेम, सौंदर्य और प्रशंसात्मक रचनाओं में चित्रित सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव अर्थ-गांभीर्य से परिपूर्ण है । सामान्यजन के प्रति उनमें अगाध स्नेह है । यही वजह है कि वे अपने कवि-कर्म की सार्थकता उन करोड़ों लोगों की वाणी बनने में मानते हैं, जिनकी थकन और बेबसी उन्हें विचलित करती है । उनके प्रेम, सौंदर्य और प्रशंसात्मक कविताओं में भी यह सामान्यजन चित्रित है । जहाँ एक ओर आभिजात्य सौंदर्य के प्रति उनमें रूझान दृष्टिगत होता है, वहीं दूसरी ओर किसान और मजदूर का श्रमशील सौंदर्य देखकर वे अभिभूत होते हैं । महान विभूतियों की प्रशस्ति करते वक्त भी उनके जहन में सामान्यजन के प्रति लगाव ही दिखाई देता है । इस तरह कहा जा सकता है कि उनकी कविताओं के अन्य पहलू उनकी अनुभूतियों की व्यापकता और गहनता, सृजनात्मक कुशलता और रचनात्मक वैविध्य को प्रकट करते हैं ।

सन्दर्भ सूची

1. सं.– नामवर सिंह, चिंतामणि भाग–3, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय आवृत्ति, 2004, पृष्ठ संख्या – 232

2. शर्मा रमाकांत, कविता की लोकधर्मिता, रॉयल पब्लिकेशन, राजस्थान, प्रथम संस्करण 2009, पृष्ठ संख्या – 191

3. श्रीवास्तव एकांत, कविता का आत्मपक्ष, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2010, पृष्ठ संख्या – 49

4. शर्मा ब्रजमोहन, कवि अज्ञेय : विश्लेषण और मूल्यांकन, इतिहास शोध संस्थान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2000, पृष्ठ संख्या – 80

5. KavitaKosh.org/kk/ चिर तृषित कंठ से तृप्त विधुर/ जयशंकर प्रसाद, accessed on 24/02/14 at2:00pm

6. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग –1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2007, पृष्ठ संख्या – 25

7. वही, पृष्ठ संख्या – 199

8. वही, पृष्ठ संख्या – 199

9. वही, पृष्ठ संख्या – 199

10. वही, पृष्ठ संख्या – 128

11. वही, पृष्ठ संख्या – 193

12. वही, पृष्ठ संख्या – 282

13. वही, पृष्ठ संख्या – 193

14. वही, पृष्ठ संख्या – 158

15. वही, पृष्ठ संख्या – 168

16. वही, पृष्ठ संख्या – 163

17. वही, पृष्ठ संख्या – 199

18. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों का यार पृष्ठ संख्या –27

19. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 136

20. वही, पृष्ठ संख्या – 193

21. वही, पृष्ठ संख्या – 150

22. वही, पृष्ठ संख्या – 179

23. वही, पृष्ठ संख्या – 190

24. वही, पृष्ठ संख्या – 222

25. वही, पृष्ठ संख्या – 197

26. वही, पृष्ठ संख्या – 204

27. घोरपड़े पद्मजा, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में प्रणय–चित्रण, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1998, पृष्ठ संख्या – 94

28. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 24

29. वही, पृष्ठ संख्या – 135

30. वही, पृष्ठ संख्या – 141

31. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग– 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 291

32. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 140

33. वही, पृष्ठ संख्या – 144

34. वही, पृष्ठ संख्या – 143

35. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 261

36. मुजावर डॉ. सरदार, दुष्यंत कुमार की गज़लों का समीक्षात्मक अध्ययन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2003, पृष्ठ संख्या – 37

37. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 140

38. वही, पृष्ठ संख्या – 266

39. वही, पृष्ठ संख्या – 288

40. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 25

41. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2007, पृष्ठ संख्या – 172

42. सं.– विजय बहादुर सिंह, यारों का यार, यश पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ संख्या – 66

43. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग– 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 82

44. शर्मा रामविलास, आस्था और सौंदर्य, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पहली आवृत्ति, 2002, पृष्ठ संख्या – 36

45. शुक्ल रामचंद्र, चिंतामणि भाग–1, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्रथम संस्करण, संवत् 2058 वि., पृष्ठ संख्या – 91

46. वही, पृष्ठ संख्या – 92

47. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 394

48. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 263

49. वही, पृष्ठ संख्या – 263

50. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 381

51. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 199

52. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 123

53. वही, पृष्ठ संख्या – 375

54. वही, पृष्ठ संख्या – 395

55. वही, पृष्ठ संख्या – 243

56. वही, पृष्ठ संख्या – 201

57. वही, पृष्ठ संख्या – 179

58. वही, पृष्ठ संख्या – 241

59. वही, पृष्ठ संख्या – 175

60. वही, पृष्ठ संख्या – 223

61. वही, पृष्ठ संख्या – 145

62. वही, पृष्ठ संख्या – 358

63. वही, पृष्ठ संख्या – 141

64. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 2, किताबघर प्रकाशन,

नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 285

65. वही, पृष्ठ संख्या – 228

66. सं.– विजय बहादुर सिंह, दुष्यंत रचनावली भाग – 1, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007, पृष्ठ संख्या – 148

67. वही, पृष्ठ संख्या – 144

68. वही, पृष्ठ संख्या – 139

69. वही, पृष्ठ संख्या – 215

70. वही, पृष्ठ संख्या – 215

71. वही, पृष्ठ संख्या – 216

72. शर्मा रामविलास, निराला, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2000, पृष्ठ संख्या – 146

73. वही, पृष्ठ संख्या – 216

74. वही, पृष्ठ संख्या – 219